पीतांबर सिंह और अन्य।

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

(2010 की सिविल अपील संख्या 8865)

8 अक्टूबर, 2010

{वी. एस. सिरपुरकर और सिरियाक जोसेफ, जे. जे.}

भूमि की अधिकतम सीमाः

बिहार भूमि रिफोर्म (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण) अधिनियम, 1961-उपधारा 2 (ई.ई), 11(1) और 32 बी-बिहार भूमि रिफोर्म (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण (संशोधन) अधिनियम, 1982-वर्ग-द्वितीय भूमि-मिताक्षरा संयुक्त परिवार जिसमें अपीलार्थी संख्या 01, उसकी पत्नी और बेटों की कुल पारिवारिक स्वामित्व 33.95 एकड़ है-ड्राफ्ट बयान बनाकर प्रकाशित किया गया जो यह दर्शाता है कि अपीलार्थी सं. 01 केवल मात्र 18 एकड़ की भूमि के लिए हकदार था, परिवार अतिरिक्त भूमि के रूप में 15.95 एकड़ भूमि का स्वामी था- अपील न्यायालय द्वारा यह पाया गया कि अपीलार्थी सं. 01 का एक बेटा अर्थात अपीलार्थी सं. 02 वयस्क था और इसलिए वह अपीलार्थी सं. 01 की तुलना में पृथक से एक परिवार

माना जायेगा-उक्त आदेश को राज्य द्वारा चुनौती नहीं दी गई और उसे अंतिम रूप दिया गया-संशोधन अधिनियम लागू हुआ- धारा 32बी को राज्य सरकार द्वारा आधार बनाया गया-नईं कार्यवाही की शुरूआत-सीलिंग पुनः निर्धारित की गई-चुनौती दी गई-उच्च न्यायालय द्वारा खारिज किया गया-निर्धारितः हस्तगत प्रकरण के तथ्यों व परिस्थितियों में, धारा 32(बी) को राज्य सरकार द्वारा आधार नहीं बनाया जा सकता था, और उच्च न्यायालय द्वारा तत्पश्चात् कार्यवाही को पुनः खोलकर एक त्रुटि कारित की गई-चूंकि अपील न्यायालय द्वारा पारित आदेश अंतिम रूप ले चुका है, ऐसी स्थिति में आगे कोई भी कार्यवाही करने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है-गुणावगुण के आधार पर भी उच्च न्यायालय ने परिवार को एक परिवार के रूप में माननें और परिवार की पात्रता को 18 एकड़ में सीमित करने के लिए कार्यवाही करने में एक पेंटेट त्रुटि की-अपीलार्थी सं. 01 व 02 के अधिकार बतौर सह-भागीदार बरकरार थे-इसके अतिरिक्त चूंकि वे सुसंगत तिथि पर वयस्क थे, उन्हें एक ही परिवार के माना नहीं जा सकता था और वह स्वतंत्र परिवार के रूप में माने जाने के हकदार थे जिसकें परिणामस्वरूप दो परिवार हांेगे और कुल भूमि केवल मात्र 33.95 एकड़ होने के कारण कोई अतिरिक्त भूमि नहीं हो सकती थी, जैसा कि अधीनस्थ न्यायालयो द्वारा गलत रूप से निर्धारित किया गया है, विशेष रूप से संशोधन अधिनियम की धारा 32(बी) के तहत कार्यवाही को पुनः खोले जाने के बाद।

अपीलार्थी संख्या 01 मूल भूमि धारक ''बी' का पुत्र है। वे मिताक्षरा संयुक्त परिवार के सदस्य थे और उनकी पारिवारिक स्वामित्व की कुल भूमि 33.95 एकड़ थी जो कि वर्ग दो भूमि है। बिहार भूमि रिफोर्म (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण) अधिनियम 1961 के तहत तय की गई सीमा ऐसी भूमि के संबंध में 18 एकड़ है। ''बी' की मृत्यु के बाद अपीलार्थी संख्या 01 के पास केवल 18 एकड़ जमीन बाकि रही और इस प्रकार परिवार अतिरिक्त भूमि के रूप में 15.95 एकड़ भूमि का धारक था।

ड्राफ्ट बयान प्राप्त होने पर, अपीलार्थी संख्या 01 ने अधिनियम की धारा 10(3) के तहत अपनी आपत्तिया दर्ज की जिसमें यह अभिवचन किया कि उसका बेटा, अपीलार्थी संख्या 02 दिनांक 09.09.1970 को वयस्क हो गया था, जो तिथि बिहार भूमि रिफोर्म (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण) अधिनियम 1961 के तहत प्रासंगिक तिथि है, और इस तरह, वह भी अपने हिस्से का हकदार था और उसे अपीलार्थी के परिवार के सदस्य के रूप में नहीं ठहराया जा सका। उक्त आपत्ति को खारिज कर दिया गया। अपील प्राधिकरण ने अपने आदेश दिनांकित 15.02.1977 के माध्यम से इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अपीलार्थी संख्या 02 दिनांक 09.09.1970 को वयस्क था और तद्रुसार वह अपीलार्थी संख्या 01 से अलग परिवार के रूप में माने जाने का हकदार था, और यह कि दोनों परिवारो अर्थात अपीलार्थी संख्या 01 व 02 के मध्य कोई अतिरिक्त भूमि

नहीं थी। उक्त आदेश को राज्य द्वारा निगरानी के माध्यम से कोई चुनौती नहीं दी गई और उक्त आदेश को ही अंतिम रूप से बरकरार रखा गया।

इसके पश्चात् बिहार भूमि रिफोर्म (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण (संशोधन) अधिनियम, 1982 लागू हुआ जिसके अनुरूप एक नया ड्राफ्ट बयान जारी किया गया था और अधिकतम सीमा पुनः निर्धारित की गई थी, यह निर्धारित करते हुए कि अपीलार्थीयों के परिवार को एक ही परिवार माना जाये। उक्त आदेश की पुष्टि न्यायाधिकरण द्वारा की गई। उक्त आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी रिट याचिका के माध्यम से उच्च न्यायालय गये। उच्च न्यायालय की एकल पीठ ने एक अंतिम आदेश के माध्यम से यह कहा कि अपीलार्थीयो को दो परिवारो के मध्य में माने जाने का हकदार पाया गया था, परंतु यह भी कहा कि पुर्व में प्रकाशित अधिसूचना को संशोधन अधिनियम की धारा 32बी के लागू होने की दिनांक से ही लागू माना जायेगा। उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने उक्त आदेश की पुष्टि की।

न्यायालय ने अपील को अनुमति देते हुए अभिनिर्धारित किया

1. उच्च न्यायालय की एकल पीठ ने त्रुटि कि यह विचार रखते हुए कि चूंकि अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 11(1) के तहत ड्राफ्ट विवरण का कोई अंतिम प्रकाशन बिहार भूमि रिफोर्म (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण (संशोधन) अधिनियम, 1982

के लागू होने से पहले नहीं हुआ था, प्राधिकरण धारा 10 अधिकतम सीमा अधिनियम के तहत कार्यवाही को निस्तारित करने में सही था। एकल पीठ ने किसी भी तरीके से मामले के गुणावगुण पर अपना मत व्यक्त नहीं किया और ना ही उनके द्वारा आदेश दिनांक 15.12.1997 को प्रभावी बनाया गया, जहां यह स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया था कि भूमि धारक दो परिवारो के रूप में माने जाने के हकदार थे। सम्पूर्ण कार्यवाही विधिनुरूप नहीं होकर विवेकाधीन थी। अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 11(1) के तहत प्रारूप विवरण को अंतिम रूप देना चाहिए था और आदेश दिनांक 15.12.1977 के पारित होने के बाद उसका प्रकाशन किया जाना चाहिए था।

2. हस्तगत मामलें में, जैसा कि उच्च न्यायालय ने एल.पी.ए. में उल्लेख किया है, पुराना प्रारूप विवरण तब प्रकाशित किया गया था जब हस्तगत मामला राज्य और भूमि धारको के मध्य अंतिम रूप से निर्धारित नहीं किया गया था। उक्त प्रारूप समय से पहले प्रकाशित किया गया था और इसलिए उसे एक सम्यक् प्रारूप के रूप में माना नहीं गया और परिणामस्वरूप उसका प्रकाशन भी नहीं हो सका। वास्तव में, खण्डपीठ द्वारा यह सही रूप से पाया गया है कि प्रकाशन आपत्ति, अपील और निगरानी के निस्तारण के बाद ही किया जाना था, और यदि प्रकाशन आपत्ति अथवा अपील अथवा निगरानी के निस्तारण से पूर्व किय गया है और प्रारूप विवरण में कोई संशोधन आपत्ति अथवा अपील अथवा निगरानी के

निस्तारण के माध्यम से नहीं लाया गया है, प्रकाशन फिर भी सही माना जायेगा, परंतु यदि आपत्ति, अपील अथवा निगरानी मंे किये गये आदेश कोई परिवर्तन लाते है, उक्त प्रकाशन सही नहीं माना जायेगा क्योंकि उपधारा के अनुसार प्रारूप विवरण का प्रकाशन आपत्ति अथवा अपील अथवा निगरानी के निस्तारण के अनुसार किया जाना चाहिए। खण्डपीठ ने यह निर्धारित करते हुए एक सही निष्कर्ष निकाला है कि ''15.12.1997 के अंतिम प्रकाशन जैसा कि उससे पहले किये गये आदेश के साथ मिटा दिया गया था, आपत्ति के आधार पर पारित किया गया, जिसके आधार पर उसे प्रकाशित किया गया था। '' खण्डपीठ ने हालांकि यह कहा कि ऐसा कोई ड्राफ्ट बयान पहले कभी प्रकाशित नहीं किया गया जिसके माध्यम से पूर्व ड्राफ्ट बयान में बदलाव लाया गया हो, और फिर यह माना कि चंूकि कोई अंतिम प्रकाशन आदेश दिनांकित 15.12.1977 कि तहत नहीं किया गया था, धारा 32बी लागू हुई और परिणामस्वरूप नहीं प्रकिया उक्त धारा के अनुरूप चालू की गई, जो कि पूर्ण रूप से एक त्रुटियात्मक दृष्टिकोण है। वास्तव में आदेश दिनांकित 15.12.1977 पारित होने के बाद, अपीलार्थीयों को कुछ नहीं करना था बल्कि राज्य की यह जिम्मेदारी थी कि वे उक्त आदेश के अनुरूप एक अंतिम ड्राफ्ट बयान जारी करें और फिर उसका प्रकाशन आदेश दिनांकित 15.12.1977 के तहत करे, जो जिम्मेदारी अधिनियम की धारा 11(1) की सकारात्मक भाषा से उत्पन्न हुईं। इसमें भूमि धारको/अपीलार्थीयों का कोई दोष नहीं है यदि राज्य सरकार ने चार

साल तक कुछ भी नहीं किया अर्थात 16.12.1977 और 09.04.1981 के बीच जब संशोधन अधिनियम लागू हुआ। हालांकि राज्य सरकार की निष्क्रियता का संज्ञान उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया है, खण्डपीठ ने उस संबंध में कोई कार्यवाही करने से इंकार कर दिया और उसके द्वारा यह पाया गया कि ''हालांकि कलेक्टर द्वारा अपीलीय आदेश दिनांकित 15.12.1977 के पारित होने के पश्चात् प्रारूप विवरण का अंतिम प्रकाशन ना कर पाने के संबंध में कोई उचित कारण नहीं है, लेकिन फिर भी तब धारा 32(बी) में निहित अधिदेश को ध्यान में रखते हुए अधिनियम के संबंध में विचाराधीन भूमि के संदर्भ में नई कार्यवाही आवश्यक हो गई है।'' ऐसे दृष्टिकोण को कोई स्वीकार नहीं कर सकता है यह कर्तव्य राज्य सरकार का था। यदि राज्य सरकार ने अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया, तो उसे भुगतना पडेगा और उसकी निष्क्रियता के कारण अपीलार्थीयो को पीड़ित नहीं किया जा सकता है। इसलिए इन परिस्थितियों में, धारा 32(बी) पर राज्य सरकार द्वारा भरोसा किया जाना उचित नहीं था और एकल पीठ के साथ-साथ खण्डपीठ ने पश्चावर्ती रूप से कार्यवाही को पुनः आरम्भ कर विधि की दृष्टि में एक त्रुटि कारित की है। उक्त वर्णित प्रक्रिया दिनांक 15.12.1977 को अंतिम छोर पर आ गई थी।

3. यहां तक कि गुणावगुण पर भी, खण्डपीठ ने उपरोक्त वर्णित परिवार को एक परिवार के रूप में मानने और परिवार के अधिकार को 18 एकड़ तक सीमित करने में एक पेंटेट त्रुटि कारित की है। अपीलार्थी संख्या

01 के पिता के दिनांक 09.09.1970 को जीवित थे और अपीलार्थी संख्या 01 उस समय वयस्क था। इसके अतिरिक्त वयस्क पुत्र परिवार के भाग नहीं थे। अधिनियम की धारा 2(ईई) में 'परिवार' की परिभाषा का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि वयस्क पुत्र को 'परिवार' की परिभाषा से बाहर रखा गया है। इसके अलावा भी दिनांक 09.09.1970 को अपीलार्थी संख्या 02 परिवार में वयस्क था, जैसा कि अपील प्राधिकरण द्वारा अपने आदेश दिनांकित 15.12.1977 में पाया गया है। अतः किसी भी परिस्थिति में इसे एकल परिवार के रूप में माना नहीं जा सकता है। खण्डपीठ ने इस संबंध में यह कहने की कोशिश की कि दिनांक 09.09.1970 या उससे पहले कोई अभिवचन नहीं किया गया था, संयुक्त परिवार में विभाजन हुआ और परिणामतः अपीलार्थी संख्या 01 पृथक रूप से परिवार कहलाये जाने के लिए हकदार हो गया, ऐसे में अपीलार्थी संख्या 01 को रैयत नहीं बुलाये जाने का कोई प्रश्न ही नहीं है, खास तौर पर जब अपीलार्थी संख्या और उसके पिता संयुक्त मिताक्षरा परिवार के सहभागीदार के रूप में विवादित भूमि के धारक थे और इसलिए उनमें से प्रत्येक अपने हिस्से की सीमा तक भूमि के हकदार थे। खण्डपीठ ने यह पाया कि वे केवल संयुक्त परिवार को बाधित करने की मांग करके अपने अधिकारो को लागू करने के हकदार थे। हालांकि ऐसा नहीं किया गया है और उनके व्यक्तिगत अधिकार स्पष्ट नहीं हुये। खण्डपीठ द्वारा आगे यह पाया गया कि हालांकि उनके पास ''फ्लोटिंग अधिकार'' था, लेकिन धारा 2(ईई) में उल्लेखित परिवार की

परिभाषा में स्थापित स्पष्टीकरण को दृष्टिगत रखते हुए, ऐसा फ्लोटिंग अधिकार परिवार का गठन समझने के लिए काम नहीं आ सकता है। उक्त दृष्टिकोण को अस्वीकार किया गया। एक सहभागीदार का अधिकार उसके जन्म के साथ ही उत्पन्न होता है और परिवार की परिभाषा को दृष्टिगत रखते हुए, जो कि केवल मात्र एक व्यक्ति, उसके पति/पत्नि और अवयस्क बच्चों को शामिल करता है, खण्डपीठ का दृष्टिकोण त्रुटियात्मक है। अधिनियम की धारा 2(ईई) का स्पष्टीकरण मामलें को स्पष्ट करता है जब उसमंे यह उल्लेखित है कि व्यक्तिगत कानून प्रासंगिक नहीं होगा और ना ही उसे परिवार के गठन के संबंध में पढा जावेगा। इसलिए, हालांकि यह 'बी' का संयुक्त परिवार का और अपीलार्थी संख्या 01 व उसके बाद अपीलार्थी संख्या 02, अपीलार्थी सं. 01 व 02 के अधिकार सह-भागीदार के रूप में अक्षुण्ण रहेंगे। इसके अलावा क्योंकि वे संबंधित तिथि को वयस्क थे, उन्हें एक परिवार के रूप में माना नहीं जा सकता और वे पृथक परिवारों के रूप में माने जाने के हकदार थे जिसके परिणामस्वरूव वह दो परिवार होंगे और कुल भूमि केवल 33.95 एकड़ होगी, कोई अतिरिक्त भूमि नहीं हो सकती है जैसा कि अधीनस्थ न्यायालयो द्वारा गलत पाया गया, विशेष रूप से संशोधन अधिनियम की धारा 32(बी) के तहत कार्यवाही को पुनः खोलने के बाद। परिणामस्वरूप यह निर्धारित किया जाता है कि आदेश दिनांक 15.12.1977 को अंतिम रूप दिया जाता है और इसके अतिरिक्त कोई

कार्यवाही करने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है। {पैरा 7} {971-एचय 972-ए-बी-ई-एचय 973 ए-जी}

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णय: सिविल अपील सं. 2010 के 8865 से।

पटना उच्च न्यायालय के एल.पी.ए. सं. 1483 मे पारित 1997 के निर्णय और आदेश दिनांकित 30.11.2006 से

नागेंद्र राय, शांतनु सागर, स्मारहर, गोपी रमन और अपीलार्थियों के लिए टी.महिपाल। उत्तरदाताओं के लिए गोपाल सिंह और मनीष कुमार। न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

वी.एस. सिरपुरकर, जे. 1. अनुमति स्वीकृत।

2. लेटर्स पेटेंट अपील को खारिज करने वाला और एकल पीठ के आदेश की पुष्टि करने वाला निर्णय इस अपील में विचार करने बाबत् पेश हुआ है। विद्वान एकलपीठ उच्च न्यायालय ने रिट याचिका को खारिज कर दिया था। आदेश दिनांकित 31.12.1983 जो कि उपमण्डल अधिकारी द्वारा सिलिंग प्रकरण संख्या 15/1973 में पारित किया गया था, धारा-10 (3) बिहार भूमि रिफोर्म (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण) अधिनियम 1961 के तहत पेश की गई आपत्ति को खारिज किया गया। उक्त आदेश पुष्टि जिला कलक्टर द्वारा दिनांक 21.05.1984 को की गई और इसके बाद निगरानी में भी रिजोल्यूशन दिनांकि 22.05.1986

के माध्यम से भी उक्त आदेश की पुष्टि बोर्ड ऑफ रेवेन्यू द्वारा की गई। इसके बाद अपीलार्थी रिट याचिका के माध्यम से उच्च न्यायालय गये, जो कि विद्वान एकलपीठ द्वारा खारिज की गई। इसके बाद अपीलार्थियों ने लेटर्स पेटेंट अपील पेश की, हालांकि उक्त लेटर्स पेटेंट अपील में उपर वर्णित किये गये सारे आदेशों की पुष्टि की गई।

3. श्री नागेन्द्र राय विद्वान वरिष्ठ वकील अपीलार्थियों की ओर से पेश तर्कों का विवेचन करने के लिए प्रकरण के तथ्यों का अवलोकन करना आवश्यक है।

4. भगवतीसिंह मूल भूमिधारक थे। उनके पुत्र पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी संख्या 01) और पीताम्बर सिंह के दो पुत्र हैं, रविन्द्र कुमार सिंह (अपीलार्थी संख्या 02) और जितेन्द्र कुमार सिंह। भगवती सिंह दिनांक 09.09.1970 को जीवित थे, जो दिनांक अधिकतम सीमा अधिनियम के तहत एक प्रासंगिक तिथि है। पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी संख्या 01) और उसकी पत्नी और बच्चे भगवती सिंह के साथ रह रहे थे। वे सभी संयुक्त मिताक्षरा परिवार के सदस्य थे और उनका कुल पारिवारिक स्वामित्व की भूमि 33.95 एकड़, वर्ग 02 की भूमि थी। अधिकतम सीमा अधिनियम के तहत तय की गई अधिकतम सीमा ऐसी भूमि के सम्बन्ध 18 एकड़ है। सीलिंग प्रकरण संख्या 15/1973 के तहत पीताम्बर सिंह के विरूद्ध कार्यवाही उस समय तक प्रारम्भ कर दी गई थी क्यूंकि उस समय

भगवतीसिंह, उनके पिता की मृत्यु हो गई थी। फिर भी पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी संख्या 01) का एक बड़ा बेटा रविन्द्र सिंह भी था। एक प्रारूप विवरण बनाया गया और प्रकाशित किया गया। जिसमें यह दर्शाया गया था कि पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी संख्या 01) केवल 18 एकड़ भूमि रखने का हकदार था। और इस प्रकार परिवार अतिरिक्त भूमि के रूप में केवल 15.95 एकड़ भूमि का स्वामी था। प्रारूप विवरण प्राप्त करने पर, पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी संख्या 01) ने अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 10(3) के तहत अपनी आपत्तियां दर्ज की। यह सुस्पष्ट किया गया कि सुसंगत तिथि पर अधिकतम सीमा अधिनियम के तहत जो भी स्थिति थी, जब कार्यवाही की गई थी, रविन्द्र कुमार सिंह अपीलार्थी सं. 02 दिनांक 09.09.1970 को वयस्क था और इस प्रकार वह भी अपने हिस्से का हकदार था और उसे पीताम्बर सिंह के परिवार का सदस्य नहीं ठहराया जा सकता था। उक्त आपत्ति को आदेश दिनांकित 31.10.1975 के माध्यम से खारिज किया गया। उक्त आदेश के विरूद्ध अपील दायर की गई, जहां यह निर्धारित किया गया कि अपीलार्थीयों को दो परिवारों के रूप में माना जाना चाहिए। हालांकि, इस आदेश को वापिस ले लिया गया और अपील प्राधिकरण के समक्ष दायर की गई अपील आदेश दिनांकित 30.06.1976 के माध्यम से खारिज हो गई। उक्त आदेश के विरूद्ध एक निगरानी दायर की गई। जिसे आदेश दिनांकित 10.05.1977 के माध्यम से स्वीकार किया गया, जिसके तहत प्रकरण को रविन्द्र कुमार सिंह (अपीलार्थी संख्या 02) की दिनांक

09.09.1970 को होने वाली आयु का निर्धारण करने के लिए अपील प्राधिकरण को रिमाण्ड किया गया। उक्त रिमाण्ड के बाद, अपील प्राधिकरण ने अपने आदेश दिनांकित 15.12.1977 के माध्यम से यह पाया कि रविन्द्र कुमार सिंह (अपीलार्थी संख्या 02) दिनांक 09.09.1970 को वयस्क था व परिणामस्वरूप पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी संख्या 01) के परिवार की तुलना में एक पृथक परिवार के रूप में माने जाने के काबिल था। यह ध्यान रखना बहुत महत्वपूर्ण है कि उक्त आदेश को राज्य सरकार द्वारा निगरानी के माध्यम से कभी भी चुनौती नहीं दी गई और इस कारण उक्त आदेश ने अंतिम रूप प्राप्त किया। हालांकि अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 11(1) के तहत एक ड्राफ्ट बयान अंततः प्रकाशित किया गया और उक्त धारा के तहत राजपत्रित किया गया। पुराने आदेशों के आधार पर कोई ड्राफ्ट बयान आदेश दिनांकित 15.12.1977 के पारित होने के पश्चात् प्रकाशित नहीं किया गया, जो कि प्रकाशित किया जाना था अपील प्राधिकरण द्वारा किए गए परिवर्तन को दृष्टिगत रखते हुए, जहां रविन्द्र कुमार सिंह (अपीलार्थी संख्या 02) को वयस्क माना गया था और पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी संख्या 01) और उसके पुत्र रविन्द्र कुमार सिंह (अपीलार्थी संख्या 02) के परिवारों के मध्य कोई अतिरिक्त भूमि नहीं पाई गई थी।

5. यह स्पष्ट है कि दिनांक 09.04.1981 को बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण) लागू और अधिशेष भूमि अधिग्रहण) (संशोधन)

अधिनियम, 1982 लागू हुआ था। उक्त संशोधन के माध्यम से उपरोक्त वर्णित अधिनियम में दो नई धाराऐं, 32ए व 32बी, शामिल की गई थी जो कि निम्न प्रकार है:-

32ए: -अपील, निगरानी, पुनर्विलोकन या रेफरेन्स का उपशमन:-

धारा 8 या धारा 16 की उपधारा 3 के तहत पारित किए गए आदेशों से उत्पन्न होने वाले अपील, निगरानी, पुनर्विलोकन या रेफरेन्स के अलावा अपील, निगरानी, पुनर्विलोकन या रेफरेन्स जो कि बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण) लागू और अधिशेष भूमि अधिग्रहण) (संशोधन) अधिनियम, 1982 के प्रारम्भ होने की तिथि को किसी भी प्राधिकरण के समक्ष लम्बित है, उपशमित हो जाऐंगी:

बशर्ते कि ऐसी अपील पुनर्विलोकन या रेफरेन्स जो कि धारा 8 या धारा 16 की उपधारा 3 के तहत पारित हुए आदेशों से उत्पन्न हो रही है, उक्त अधिनियम के प्रारम्भ होते ही उचित प्राधिकारी के समक्ष स्वचलित रूप से पुर्नस्थापित हो जाएंगी।

32बी: नई कार्यवाही शुरू करना:-

धारा 32(ए) में निर्दिष्ट अपील, निगरानी, पुनर्विलोकन या रेफरेन्स के अलावा सभी कार्यवाहीयां जो बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण) लागू और अधिशेष भूमि अधिग्रहण) (संशोधन) अधिनियम, 1982 के प्रारम्भ होने की दिनांक को लम्बित थी, और जिनमें अंतिम

प्रकाशन धारा 11(1) जो संशोधन से पूर्व था, नहीं हुआ है उन्हें नए सिरे से धारा 10 के प्रावधानों को दृष्टिगत रखते हुए निस्तारित किया जावेगा।

संशोधन अधिनियम के लागू होने के बाद एक नया ड्राफ्ट बयान जारी किया गया। आपत्ति यह उठाई गई कि ऐसा ड्राफ्ट बयान कभी जारी ही किया नहीं जाना चाहिए था। हालांकि धारा 4(ए) के तहत पुनः निर्धारण किया गया और यह जांच की गई कि क्या दिनांक 22.10.1959 और दिनांक 09.09.1970 के मध्य भूमि का कोई हस्तान्तरण हुआ था अथवा नहीं। वास्तव में, अपीलार्थीयों के मामले में, ऐसा कोई भी हस्तान्तरण उपरोक्त वर्णित तिथियों के मध्य प्रभावी नहीं हुआ था। उपरोक्त वर्णित ड्राफ्ट बयान के विरूद्ध दायर की गई आपत्ति को आदेश दिनांक 31.12.1983 के माध्यम से खारिज किया गया, जहां अधिकतम सीमा का पुनः निर्धारण कर यह पाया गया कि अपीलार्थीयों के परिवार को एक ही परिवार माना जाए। उक्त आदेश को न्यायाधिकरण के आदेश के माध्यम से पुष्टि दी गई। उक्त आदेशों को विद्वान एकलपीठ के समक्ष चुनौती दी गई जिन्होंने यह स्पष्ट किया कि अंतिम आदेश दिनांकित 15.12.1977 में यह पाया गया कि अपीलार्थीयों को दो परिवारों के रूप में गिना जावे, फिर भी माना कि धारा 32(बी) की भाषा में, राज्य सरकार मामले को फिर से खोलने की हकदार थी। विद्वान एकलपीठ ने यह विचार व्यक्त किया कि धारा 11(1) के तहत आदेश निगरानी अधिकारी द्वारा पारित रिमाण्ड आदेश होने से पूर्व ही पारित हो चुका है और उक्त आदेश को अपील प्राधिकरण द्वारा निरस्त नहीं

किया गया। विद्वान एकल पीठ द्वारा, इसलिए, यह दृष्टिकोण लिया गया कि पुराना प्रकाशन संशोधन अधिनियम की धारा 32(बी) के लागू होने की तिथि से ही प्रभावी माना जाएगा। विद्वान एकलपीठ ने हस्तगत प्रकरण की तुलना विभाजन से सम्बन्धित सिविल मामलों से की। विद्वान न्यायाधीश ने यह भी मत व्यक्त किया कि धारा 11(1) की भाषा को दृष्टिगत रखते हुए, प्राधिकरण द्वारा ड्राफ्ट बयान का अंतिम प्रकाशन उसके द्वारा आपत्तियों पर पारित आदेश के अनुसार किया जाना चाहिए था, इस तथ्य को नजरअंदाज करते हुए कि उक्त आदेश के तहत भूमिधारक कोई अतिरिक्त भूमि का अधिकतम सीमा के तहत स्वामी था अथवा नहीं। जहां भूमिधारक द्वारा दायर की गई आपत्ति को सही माना गया है वहां प्राधिकरण को ड्राफ्ट बयान बनाना है और अंतिम प्रकाशन इस सम्बन्ध में करना है कि भूमिधारक कोई अतिरिक्त भूमि का स्वामी नहीं है। हालांकि, उन मामलों में, जहां आपत्ति को आंशिक रूप से स्वीकार किया गया है या यह पाया गया है कि भूमिधारक अतिरिक्त भूमि का मालिक था, सम्बन्धित अधिकारी को ड्राफ्ट बयान का अंतिम प्रकाशन करना अनिवार्य है जिससे यह दर्शित हो सके कि भूमिधारक कोई अतिरिक्त भूमि के कब्जे में नहीं था। विद्वान न्यायाधीश ने यह पाया कि आदेश दिनांकित 15.12.1977 के पारित होने के पश्चात् भी ऐसा कोई कदम अंतिम प्रकाशन के लिए नहीं लिया गया। इसलिए विद्वान न्यायाधीश ने यह मत प्रतिपादित किया कि चूंकि अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 11(1) के तहत कोई अंतिम प्रकाशन

ड्राफ्ट बयान का नहीं हुआ है संशोधन अधिनियम की धारा 32(बी) के लागू होने से पूर्व, अधिकारी कार्यवाही को नए रूप से निस्तारित करने में सही था धारा 10 अधिकतम सीमा अधिनियम के प्रावधानानुसार और उक्त अधिनियम की धारा 10(3) के तहत आपत्ति पर आदेश करने में। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने किसी भी रूप से प्रकरण के गुणावगुण पर कोई मत व्यक्त नहीं किया और न ही आदेश दिनांकित 15.12.1977 को प्रभावी किया, जहां यह पाया गया था कि भूमिधारक दो परिवारों के रूप में माने जाने के हकदार थे। लेटर्स पेटेण्ट अपील में यह स्पष्ट किया गया कि जो तरीका अपनाया गया है वह पूर्ण रूप से विवेकाधीन है। लेटर्स पेटेण्ट अपील में खण्डपीठ के समक्ष इस तथ्य को पुनः दोहराया गया था कि ड्राफ्ट बयान का अंतिम प्रकाशन आदेश दिनांकित 15.12.1977 के पारित होने के बाद होना जरूरी था।

6. हमारी राय में उपरोक्त तर्क अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 11(1) की भाषा को दृष्टिगत रखते हुए पूर्ण रूप से सही था जो कि निम्नानुसार है:-

11. ड्राफ्ट बयान का अंतिम प्रकाशन:

(1) जब धारा की उप-धारा (3) के तहत आपत्ति, उससे संबंधित अपील और पुनरीक्षण, यदि कोई हो तो धारा 15ए(5) का प्रावधान मसौदा विवरण में ऐसा परिवर्तन करता है जो देने के लिए आवश्यक हो। आपत्ति

पर या उस पर पारित किसी आदेश का प्रभाव अपील या पुनरीक्षण और उक्त कारण होगा परिवर्तन के साथ बयान, यदि कोई हो, तो अंत में ऐसे स्थानों पर और इस तरह से प्रकाशित किया जाता है, जो धारा(2) के तहत निर्धारित किया जा सकता है। धारा-10 और उसके द्वारा विधिवत प्रमाणित एक प्रति कलेक्टर को निर्धारित तरीके से दिया जाएगा। संबंधित भूमि धारक को।

इस मामले में जैसा कि उच्च न्यायालय ने लेटर्स पेंटेंट अपील में पाया है। पुराने ड्राफ्ट बयान तब प्रकाशित हुए थे, जब राज्य सरकार द्वारा भूमि धारकों के मध्य मामले का अंतिम विनिश्चत नहीं हुआ था, बीसलिए एक विशिष्ट तर्क उठाया गया कि जब तक राज्य और भूमि धारकों के बीच के विवाद का निस्तारण नहीं होता है, किसी भी ड्राफ्ट बयान का प्रकाशन नहीं हो सकता है। ऐसा ड्राफ्ट बयान जो समय से पहले प्रकाशित हो गया था, उसे सम्यक ड्राफ्ट बयान के रूप में माना नहीं जा सकता है और इसलिए उसका प्रकाशन भी नहीं हो सकता है। वास्तव में जब हम खण्डपीठ द्वारा प्रकाशित आदेश का अवलोकन करते हैं, तो यह पाया गया है कि प्रकाशन आपत्ति, अपील और निगरानी के निस्तारण के बाद ही किया जाना चाहिए था और अगर प्रकाशन आपत्ति अथवा अपील अथवा निगरानी के निस्तारण से पूर्व किया जाता है और ड्राफ्ट बयान में कोई परिवर्तन आपत्ति, अपील अथवा निगरानी के निस्तारण से निहित, प्रकाशन फिर भी सही माना जाएगा, परन्तु उक्त आपत्ति, अपील एवं

निगरानी में पारित किये गये आदेश उक्त प्रकाशन में परिवर्तन लाते हैं तो ऐसा प्रकाशन सही नहीं माना जाएगा, क्योंकि उपधारा के तहत यह अनिवार्य है कि ड्राफ्ट बयान का प्रकाशन आपत्ति अथवा अपील अथवा निगरानी में हुए परिवर्तन के अनुसार हो। खण्डपीठ ने भी यह सही निष्कर्ष निकाला है:

> ''इसलिए तार्किक निष्कर्ष यह होगा कि अपील आदेश दिनांकित 15.12.1977 के कारण अंतिम प्रकाशन पहले हुआ जो आपत्ति पर पारित हुए आदेश के कारण मिटा दिये गये।''

खण्डपीठ ने हालांकि यह पाया कि ऐसे कोई ड्राफ्ट बयान कभी प्रकाशित नहीं हुए थे, जिससे पूर्व ड्राफ्ट बयान में परिवर्तन लाया गया हो, बीसे ध्यान में रखते हुए, न्यायालय ने यह फैसला सुनाया कि क्योंकि आदेश दिनांकित 15.12.1977 के तहत कोर्बी अंतिम प्रकाशन नहीं हुआ, धारा 32(बी) को लागू किया गया और ऐसी नयी कार्यवाही उक्त धारा के तहत प्रारंभ की गर्बी। हमारे मत में यह पूर्व रूप से एक त्रुटियात्मक दृष्टिकोण है वास्तव में आदेश दिनांकित 15.12.1977 के पारित होने के बाद, अपीलार्थियों को कुछ नहीं करना था, बल्कि यह राज्य सरकार का कर्तव्य था कि वे एक अंतिम ड्राफ्ट बयान उक्त आदेश के आधार पर जारी कर और फिर उसका प्रकाशन आदेश दिनांकित 15.12.1977 के अनुसार करें, जो कर्तव्य अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 11(1) की सकारात्मक भाषा

से उत्पन्न होते हैं। यह भूमिधारकों/अपीलार्थियों की बिल्कुल गलती नहीं है अगर राज्य सरकार द्वारा चार सालों तक अर्थात् दिनांक 16.12.1977 और 09.04.1981 जब संशोधन अधिनियम लागू हुआ कुछ नहीं किया गया। हालांकि राज्य सरकार की निष्क्रियता को उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा देखा गया है कि फिर भी खण्डपीठ ने उस पर कार्यवाही करने से इनकार कर दिया और उसके द्वारा यह पाया गया:

> ''हालांकि कलक्टर के पास एक अपील आदेश दिनांकित 15.12.1977 पारित होने के बाद अंतिम प्रभाव से ड्राफ्ट बयान का अंतिम प्रकाशन नहीं करने के संबंध में कोई उचित कारण नहीं है, लेकिन फिर भी अधिनियम की धारा 32(बी) में निहित जनादेश को देखते हुए संबंधित भूमि के संदर्भ में नर्बी कार्यवाही अनिवार्य हो गयीं।''

हम ऐसे दृष्टिकोण की सराहना नहीं करते क्योंकि इसका अर्थ होगा राज्य सरकार की निष्क्रियता को बढ़ावा देना। हम यह फिर से दोहराते हैं कि अपीलार्थियों को ड्राफ्ट बयान जारी अथवा प्रकाशित करने से कोई लेना देना नहीं था। यह राज्य सरकार का कर्तव्य था। यदि राज्य सरकार ने अपने कर्तवय का पालन नहीं किया गया तो उसे भुगतना पड़ेगा और उसकी निष्क्रियता के कारण अपीलार्थियों को नुकसान नहीं उठाना पड़ सकता है। अतः ऐसी परिस्थितियों में यह पाया जाता है कि राज्य सरकार

द्वारा धारा 32(बी) को आधार नहीं बनाया जा सकता है और विद्वान एकल और खण्डपीठ कार्यवाही को पुनः प्रारंभ करने में गलत है जो कार्यवाही दिनांक 15.12.1977 को अंतिम छोर पर की गयी थी।

7. यह इस तथ्य से अलग है कि गुणावगुण पर भी, खण्डपीठ द्वारा परिवार को एक परिवार के रूप में मानकर और उक्त परिवार के पास 18 एकड़ की जमीन होना मानकार एक पेटेंट त्रुटि कारित की गई है। यह एक स्वीकृत स्थिति थी कि पीताम्बर (अपीलार्थी सं. 1) के पिता दिनांक 09.09.1970 को जीवित थे। इस तथ्य को लेकर भी कोई विवाद नहीं है कि पीताम्बर (अपीलार्थी सं. 1) उस समय वयस्क थे और इसके अतिरिक्त भी इस बाबत् भी कोई विवाद नहीं है कि वयस्क पुत्र परिवार के सदस्य नहीं थे। 'परिवार की परिभाषा निम्नानुसार है:-

''परिवार एक व्यक्ति, उसके माता-पिता और अवयस्क बच्चों को शामिल करता है।

स्पष्टीकरण 1:- इस खण्ड में व्यक्ति शब्द में कोई भी कम्पनी, संस्था, न्यायसंघ या व्यक्तियों का निकाय चाहे वह निगमित हों या नहीं शामिल है।

स्पष्टीकरण 2:- व्यक्तिगत कानून परिवार का गठन इस अधिनियम के तहत निर्धारित करने में सुसंगत नहीं होगा ।''

इसलिए उपरोक्त वर्णित भाषा यह साफ रूप से स्पष्ट करती है कि वयस्क पुत्र परिवार की परिभाषा में शामिल नहीं है। हस्तगत मामले में दिनांक 09.09.1970 को भगवती सिंह जिंदा था और पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी सं. 1) अवयस्क था। इसके अलावा भी रविन्द्र कुमार सिंह (अपीलार्थी सं. 2) भी परिवार में दिनांक 09.09.1970 को वयस्क था, जैसा कि अपील प्राधिकरण द्वारा आदेश दिनांकित 15.12.1977 में पायी गयी है। अतः किसी भी परिस्थिति में उन्हें एक ही परिवार के रूप में नहीं माना जा सकता है। खण्डपीठ ने यह कहकर इसको चुनौती देने की कोशिश की कि दिनांक 09.09.1970 या उससे पहले कोई अभिवचन नहीं था, व न ही संयुक्त परिवार के अधीन कोई विभाजन हुआ था और पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी सं. 1) पृथक रूप से रैयत भूमि किस्म की भूमि रखने का हकदार बनाया गया। ऐसी स्थिति में पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी सं. 1) को रैयत नहीं मानने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है, खासतौर से जब पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी सं. 1) और उसके पिता मीताच्छरा संयुक्त परिवार के सहभागीदार थे और इसलिए उनमें से प्रत्येक अपने हिस्से की सीमा तक भूमि के हकदार थे। खण्डपीठ ने यह पाया है कि वे लोग अपने अधिकार को लागू करने के हकदार केवल इस हदतक थे कि वे संयुक्त परिवार में व्यवधान विभाजन करवाकर कर सकें, हालांकि उनके द्वारा यह नहीं किये जाने पर उनके व्यक्तिगत अधिकार स्पष्ट नहीं हुए। खण्डपीठ द्वारा यह भी पाया गया कि हालांकि उनके पास संबंधित भूमि के संदर्भ में

''फ्लोटिंग अधिकार'' था, परन्तु परिवार की परिभाषा में जोड़े गये स्पष्टीकरण को दृष्टिगत रखते हुए ऐसे फ्लोटिंग अधिकार को परिवार के गबीन का निर्धारण करने के लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। अतः ऐसे दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। एक सहभागिता का अधिकार उसके पक्ष में उसके जन्म से ही सृजित हो जाता है और परिवार की परिभाषा को दृष्टिगत रखते हुए खण्डपीबी का मत त्रुटिआत्मक है। स्पष्टीकरण 2 मामले को स्पष्ट करता है जब उसमें यह उल्लेखित है कि व्यक्तिगत कानून एक परिवार के गबीन के निर्धारण के लिए सुसंगत नहीं होगा बीसलिए यह स्पष्ट है कि हालांकि भगवती सिंह और पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी सं. 1) और फिर रविन्द्र सिंह का संयुक्त परिवार था, पीताम्बर सिंह (अपीलार्थी सं. 1) और रविन्द्र सिंह के अधिकार सहभागिता के रूप में अक्षुण्ण रहेंगे। बीसके अलावा क्योंकि वह सुसंगत तिथि पर वयस्क थे, उन्हें एक ही परिवार के रूप में माना नहीं जा सकता है और वे पृथक परिवार के रूप में माने जाने के हकदार थे और कुलिया भूमि केवल 33.95 एकड़ भूमि और कोई अतिरिक्त भूमि नहीं होगी, जैसा कि अधीनस्थ न्यायालय द्वारा गलत रूप से पाया गया है। विशेष तौर पर संशोधित अधिनियम की धारा 32(बी) के तहत कार्यवाहियों के पुनः आरंभ होने पर। अतः दोनों मामलों में उच्च न्यायालय ने गलती की है। इसलिए हम इस अपील को स्वीकार करते हैं और दिनांक 31.12.1983 से पारित सभी आदेशों को निरस्त करते हैं और यह पाते हैं कि क्योंकि आदेश दिनांकित

15.12.1977 ने अंतिमता प्राप्त कर ली है, तो ऐसी स्थिति में और किसी भी कार्यवाही का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है।

अपील स्वीकार की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी साक्षी शर्मा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के लिए सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकाधिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।